क्या अंतरजातीय विवाह समाज को पतन की ओर ले जा रहे हैं?

जातीय व्यवस्था के गंभीरतम प्रश्न का उत्तर जानने के लिये हमे इस जंगम जगत की प्राणी व्यवस्था में प्रचलित जातीय संगठन को जान लेना हितकारी होगा।

जैन आगम अनुसार जीव अर्थात आत्मा समस्त स्थावर एवं त्रस संरचना में पाई जाती है. प्रत्येक जीव को प्राप्त शरीर एक यौगिकीय संरचना है, अर्थात दो या दो से अधिक पदार्थ, निश्चित दाब, निश्चित ताप और निश्चित काल (समय) में एक पृथक एवं स्वतंत्र यौगिक की रचना करते है। जो कि अपने मूल पदार्थों से सर्वथा भिन्न होता है। यहां ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि पदार्थ, दाब, ताप एवं काल में मामूली सा भी परिवर्तन मूल यौगिक अर्थात बीज अर्थात आत्मा या जीव को प्राप्त शरीर का संपूर्ण यौगिकीय चरित्र बदल देता है, इसके साथ ही रुप एवं गुण धर्म भी बदल जाते है, यह सर्वथा वैज्ञानिक एवं प्राकृतिक व्यवस्था है।

हम जानते है सभी अनाज स्वयं के रुप गुणानुसार एवं औषधीय तत्वों से युक्त विभिन्न प्रकार के हैं जो अपने जातिगत नामों से पुकारे जाते है, गेंहूँ – कठिया, शरबती, लोकवान आदि नामों से जाना जाता है और प्रत्येक में अपना औषधीय गुण है। इसी प्रकार चावल – लांजी, कालीमूंछ, बासमती, सेला आदि । फलों में आम – हापुस, दशहरी, बादाम इत्यादि सभी के अपने गुण है। ध्यान दें प्रकृति में वनस्पति पौधों में निषेचन हवा, पानी अथवा वाह्य प्राणियों द्वारा निष्पादित किया जाता है। किन्तु प्रत्येक वान स्पतिक पुष्प स्वयं की जाति के पुष्प अर्थात परागकण से निषेचित होता है और स्वयं की यौगिकीय संरचना का आकार (फल अथवा पौधा अथवा बीज) ग्रहण करता है। खुले में निषेचन अर्थात प्राकृतिक रुप से निषेचन होने के बावजूद विजातीय पुष्प के परागकण अन्य पौधे के पुष्प को निर्वचित नहीं करते और इस प्रकार किसी भी वनस्पति अर्थात फल या बीज का रुप, आकार, गंध एवं औषधीय गुण लगातार पीढ़ी दर पीढ़ी हजारों लाखों वर्षों तक सुरक्षित रहता है और इस प्रकार विपरीत परिस्थितियों में संघर्ष के बावजूद भी प्रत्येक बीज या जीव की जातीय सत्ता कायम रहती है।

पुशओं में भी जातीय व्यवस्था को इसी प्रकार समझा जा सकता है, गाय तथा भैंसों की कई जातियां है और प्राकृतिक रुप से स्वयं की संतान अर्थात जातीय संतान ही पशु उत्पन्न करते हैं जिससे उनकी जाति, दूध की गुणवत्ता एवं औषधीय तत्व सभी सुरक्षित रहते है।

आजकल दुधारु पशुओं के कृत्रिम गर्भाधान का प्रचलन है अर्थात एक जाति की गाय को दूसरे जाति के नर बुलऑक से कृत्रिम तरीके से गर्भाधान कराया जाता है । नतीज़ा – दूध के स्वाद एवं पोषक तत्व नष्ट हो जाते है ऐसे दूध से प्राप्त घी में कोई औषधी तत्व नहीं। बछड़ा अथवा बछड़ी का रुप और शारीरिक (यौगिकीय) संरचना में बदलाव आ जाता है यहां तक कि शारीरिक गंध में बदलाव आ जाने से परिपक्व अवस्था में देशी मूल का नर या मादा नज़दीक नहीं आता, ऐसा बछड़ा (संकर जाति का) अपने पिता (आर) अथवा माता (मादा प्राणी) किसी का भी प्रतिनिधि नहीं होता। वह कुल परम्परा का न तो पोषक है और न वाहक। और वह मां जिसे कृत्रिम तरीके से निषेचित किया गया था अपनी कोख की स्वाभाविक ऊर्जा को आगामी कई वर्षों के लिये नष्ट कर देती है।

मनुष्यों में वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था कृत्रिम अथवा बाहर से थोपी हुई नहीं है, यह प्राकृतिक है। हम धर्म से एक हैं लेकिन जातियां अलग अलग है।

चौरासी लाख योनियों में मनुष्य जन्म अतुलनीय श्रेष्ठ है तो इसीलिये कि मनुष्य होने के नाते ज्ञान के बल पर हमने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में श्रेष्ठता सिद्ध की है। पशु आज भी जंगल, गुफाओं और कन्दराओं में रहते हैं और मनुष्य के रहने के स्थल नई ऊंचाईयां ले रहे हैं। पंचइन्द्रियों के भोग भी श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर हों तो कुछ गलत नहीं। किन्तु ये भोग प्रकृति विरुद्ध नहीं होना चहिए। पंच महापापों में 'कुशील' भी एक महापाप है। कुशील का तात्पर्य मात्र परायी स्त्री से व्याभिचार अथवा विधर्मी से विवाह अथवा मात्र वेश्यागमन ही नहीं है बल्कि जाति संस्था से बाहर जाकर ब्याह रचना भी 'कुशील' की श्रेणी में आता है। सच्चे श्रावक अथवा श्राविका बने रहने के लिये आपको जाति समूह में शादी ब्याह रचाने होंगे। तभी आप मुनिजनों को आहार दान देने के पात्र होंगे और 'श्री' जी का अभिषेक भी आप श्रावक रहते सपन्न कर सकेंगे।

जाति अन्तर्गत ब्याह करने से न केवल आप धार्मिक एवं सच्चे श्रावक बने रह सकते हैं बल्कि आप विभिन्न प्रकार के यौन रोगों से भी मुक्त रहेंगे, यहां तक कि जाति समूह में शादी करने से व्यक्ति की संतान उत्पादक क्षमता पीढ़ी दर पीढ़ी अक्षुण्य बनी रहेगी। वंश, कुल, परम्परा और श्रावकपना भी अक्षुण्य रहेगा। इसीलिये पूर्ण विश्वास से कहा जा सकता है कि – ''अंतरजातीय विवाह समाज को मात्र पतन की ओर ही ले जा रहे है''।

– राजकुमार जैन करैरावाले
शेरपुरा, विदिशा

1008 श्री भगवान महावीर स्वामी के 2611 वीं जन्म जयंती पर.....

वह शांति दूत बन आया था।

हिंसा में उलझे जीवन को
नय से सुलझाने आया था।
वह शांति दूत बन आया था,
फैली हिंसा से त्राहि–त्राहि
गर्दन पर आरी चलती थी।।
पाखण्डी दानव के द्वारा
मानव की होली जलती थी
जब पाप काण्ड को देख तुरत
अंधेर मिटाने आया था।
वह शांति दूत बन आया था।
वह वन विहार का कुण्डलपुर
सिद्धार्थ नृपति के राज भवन ।
जन कोटि–कोटि के नयनों में
चमके त्रिशला माँ से वरनन्दन।।
धन्य । चैत्र शुक्ल तेरस का दिन
जग–जन–मन को हर्षाया था।
वह शांति दूत बन आया था ।।
प्रभु पद नख निर्झर तट से
सब एक घाट पीते पानी
सब बैर वर्ग का भेद मिटा
दी स्याद्वाद नूतन वाणी ।
घर घर में नारा विश्व धर्म का
अनेकान्त का छाया था।।
वह शांति दूत बन आया था।।
फिर तम युग ने करवट बदली
संतृप्त हृदय जीवन डोले।
भू कण–कण में समता डोली
प्राची ने अरुणिम पट खोले ।।
वह सत्य अहिंसा प्रेम मार्ग
जग को सिखलाने आया था।।
वह शांति दूत बन आया था।।
वह वीतराग निश्चल मुद्रा
वह सप्त तत्व का ज्ञान अगम।
प्रगटा उषा में ज्योति रुप
जिन तीर्थकर बनकर निरुपम।।
बन तपी हिमालय शुभ्र धवल
मानव को गले लगाया था।।
वह शांति दूत बन आया था।।
शैशव जीवन को किया पार
जब युवा अवस्था में आये।
कौटुम्बिक ममता
छोड़ छाड़
ले लक्ष्य विश्व हित को धाये ।।
''खुद जियो और जीने भी दो''
यह मंत्र सिखाने आया था।।
वह शांति दूत बन आया था।।
निज के बंधन को कांट छाट
औरों के बंधन काट सका
निज आत्मिक शक्ति प्रदर्शन से
आलोक निरन्तर ज्ञान जगा
दृग–ज्ञान चरण के संगम से
धर्मामृत पान कराया था।।
वह शांति दूत बन आया था।।
मैं पतित वीर पावन तुम हो
अरिकर्म बली को नष्ट करो ।
ओ! महावीर फिर से आकर
पथ भूलों का उद्धार करो ।
निर्ग्रन्थ प्रभु को नम्न 'फणीश'
समता का दीप जलाया था।।
वह शांति दूत बन आया था।।

– पं. बाबूलाल फणीश शास्त्री, एम.ए. साहित्यालंकार, पावागिरी ऊन, जिला खरगोन (म.प्र.)
❊ अखिल भारतीय कला संस्कृति साहित्य विद्यापीठ मथुरा (उ.प्र.) द्वारा साहित्यालंकार (वाचस्पति से सम्मानित रचना)

मृत्युभोज सर्वथा अनुचित

''जीते जी हम जरुरतमंदों को खिला न पाये, मरने पर भरे पेटवालों को भरपूर खिलाया गया।''

ये व्यथा मरने वाला व्यक्ति आकर बता नहीं सकता लेकिन उसके मरने पर दिये गये मृत्युभोज को देखकर उसकी व्यथा का अंदाजा सहज ही लगाया जा सकता है। जैन दर्शन को उठाकर देखे तो मृत्यु भोज देने का कहीं कोई प्रमाण नहीं मिलता है, न ही हमारे दर्शन में इसका कोई औचित्य है। जैन दर्शन के सिद्धांत कभी भी अतार्किक नहीं होते हर सिद्धांत के पीछे कुछ पुख्ता तर्क है। किन्तु मृत्युभोज का कहीं कोई तर्क या प्रमाण है ही नहीं। पहले हम यह विचार करें कि प्रथा या रीति क्या होती है, प्रथा या रीति किसी घटना विशेष या प्रसिद्ध व्यक्ति के द्वारा की गई कोई क्रिया से जुड़ी होती है । कभी कोई घटना घटी और वह लोगों को रुचिकर या अरुचिकर लगी तो लोग उसका अनुशरण करने लगते है एक प्रसंग से इसे आसानी से समझा जा सकता है । राजमार्ग पर राजा की सवारी आना थी, मार्ग पर गंदगी देख मंत्री सकपका जाता है, सफाई करवाने का समय न होने से गंदगी को मंत्री फूलों से ढंक देता है। राजा फूलों को ढेर देख मंत्री से वस्तु:स्थिति जानकार बोलते है कि आप विवेकशील होकर यदि इस प्रकार का कार्य करेंगे तो सामान्य जन इसे एक परम्परा बना लेंगे। आशा है आप समझ गये होंगे कि मृत्युभोज का आयोजन हम क्यों कर रहे है। वैष्णव धर्म में ब्राह्मणों को मृत्यु भोज दिया जाता है ताकि वह उनके पितरो की आत्मा की संतुष्टि हो जाये परन्तु हमारे दर्शन के अनुसार आत्मा तीन घड़ी पश्चात ही नया शरीर धारण कर लेती है और वहां भी आहार ग्रहण करने लगती है तो भला हम किसकी आत्म संतुष्टि के लिये मृत्युभोज देते है । क्या हमें हमारे अपने की मृत्यु की प्रसन्नता है जिसके लिये भोज देकर हम खुशी मनाते है, या फिर यह तर्क कि उनकी जिंदगी अच्छी निकल गई, मृत्यु भी अच्छी हुई इस खुशी में भोज देते हैं तो मरने वाले की जिंदगी में ही जरुरतमंदों को खिलाकर उनके जीते जी ही हम उन्हें खुशी क्यों नही देते है ? अपने संबंधी की मृत्यु से वैसे ही परिजन दुखी होते है उस पर उन पर पूरे समाज को भोज देने का अनावश्यक बोझ आ जाता है। वह व्यक्ति भोज का इंतजाम करे या फिर अपने परिवार वालों का ढाढस बंधाये यह हमें विचार करना चाहिए, थोड़ा सा विवेकपूर्वक सोचेंगे तो अपने आप ही इस भोज की सच्चाई हमारे सामने होगी तब आप भी हमारे साथ होंगे और साथ दे रहे होंगे मरने वाले परिवार का, न की उसके मृत्यु भोज के आयोजन का।

– अर्चना जैन, सहसंपादिका

पाठको की कलम से ...

आप अंक बराबर भेज रहे हैं, इसके लिए आभारी हूँ। गोलालारीय समाज अब दो चार स्थानों पर केन्द्रित न रहकर जगह जगह बिखर गया है। ऐसे में एक ऐसे पत्र की बेहद जरुरत थी जो सबको आपस में संपर्क में बनाये रखे और जरुरी सूचनाएँ मुहैया कर सके। मैं उम्मीद करता हूँ, आपके प्रयत्न और आपका यह अखबार गोलालारीय समाज के लिए एक स्थायी दीपस्तम्भ का कार्य करेगा। अखबार का कागज, मुद्रण अत्यंत स्तरीय है। हिन्दी और खासकर जैन अखबारों के प्रूफ में जो असह्य त्रुटियां होती है उनसे भी आपने इस अखबार को बचाया है। बधाई ।

– डॉ. जयकुमार जलज, रतलाम

'गोलालारीय दर्शन' द्वारा विद्यार्थियों और युवा प्रतिभाओं के प्रोत्साहन स्वरुप किये जा रहे प्रयास सराहनीय है। गतवर्ष प्रावीण्य सूची में स्थान प्राप्त छात्रों के चित्रों और उनकी विशेष उपलब्धियों का प्रकाशन तो प्रशंसनीय था ही, साथ ही उनके प्रोत्साहन और सम्मान स्वरुप वितरित किये गये प्रशस्ति–पत्र निस्संदेह स्वागत योग्य है। प्रशस्ति–पत्र का मुद्रण, प्रारुप आदि अत्यंत स्तरीय है। ऐसे सत्प्रयास हेतु आपको साधुवाद। एक सुझाव प्रेषित करना चाहती हूँ कि पत्र में बाल और युवा प्रतिभाओं की रुचि संवर्धन हेतु कुछ स्तंभ प्रारंभ किये जायें जिससे पत्र में उनका योगदान बढ़े और उनके विचारों से भी समाज अवगत हो सके।

– कु. आयुषी जैन, स्कीम नं. 74, इन्दौर